साहित्य संहिता

Available at http://sahityasamhita.org/

ISSN 2454-2695
Volume 01 Issue 08
September 2015

छूटने का बंधन

- पंकज त्रिवेदी

संपादक : विश्वगाथा (त्रैमासिक मुद्रित पत्रिका)

गोकुलपार्क सोसायटी, 80 फ़ीट रोड, सुरेन्द्र नगर,

गुजरात - 363002

जब एक कदम आगे बढ़ते हैं हम, एक कदम पीछे छूट जाती हैं ज़मीं | छूटता रहता है सबकुछ नई राह पर, छूटता है हर कोई इंसान एक रिश्ते से नए रिश्ते की पंख लिए | कितना कुछ छूट जाता है प्रतिदिन हमारे हाथों से, पैरों से, मन से, आत्मा से ....!

छूटते-छूटते न जाने हम कभी किसी के लिए अछूते हो जाते हैं, किसी के लिए दुश्मन तो कभी दोस्त बन जाते हैं, रिश्तों के बंधन में बंधते हुए भी अनगिनत धारणाओं से छूटने लगते हैं या फिर छूटी हुई धारणाओं के बंधन में खुद को बांधकर आगे बढ़ते है किसी के लिए प्रभाव या अभाव को लिए !

मेले में बच्चों को लेकर जाते है तो गैसे के गुब्बारों सा मन बच्चों के बहाने हवा में लहराता है और हम पलभर के लिए बच्चे बन जाते हैं | जवानी छूट जाती है तो बुढ़ापा आता है और वहाँ से फिर कभी छूटकर मन बच्चा बन जाता है | छूटना और छोड़ना ही नियति है तो हम क्यूं बार बार बंधन में फंसने लगते है? छूटने की मंशा, ख्वाहिश, इच्छा... ये सबकुछ बंधन का ही परिणाम है | तो फिर बंधन के प्रति इतनी घृणा, अस्वीकार या तर्क करने की जरुरत ही कहाँ?

सबकुछ छोड़कर, समाज का त्याग करते हुए, जीने का अर्थ साधुता तो नहीं है न? हम अगर धर्म की आड़ में, संसार के सुख को भोगने का त्याग करके घर से निकल पड़ते हैं | तब एक इंसान के नाम की पहचान को पूर्वाश्रम में छोड़कर नए अवतार में जन्म लेते हैं | वहाँ भी एक नया परिवेश हमारा इंतज़ार करता हुआ हमें बाँध लेता है | वो बंधन होता है समाज के लोगों की नज़रों में साधुता का ! इस रूप में भी हम पर अनगिनत आँखों के द्वारा निगरानी होती है | हमारे युनिफोर्म होते है एक साधु, सन्यासी या फ़कीर का | उन लोगों के लिए निश्चित किए गए युनिफोर्म में रहना, भौतिक सुविधाओं को त्यागना, नंगे पाँव चलते हुए धर्मग्रंथों की, ज्ञान की या उपदेश की बातें करना... यह सबकुछ करना बंधन नहीं है? हम मुक्ति पाने को निकले हुए है फिर भी मुक्ति के नाम पर छूटने की प्रक्रिया होती ही नहीं है |

छूटने की प्रबलता हमें उन बंधनों में कुछ ज्यादा ही घसीटकर ले जाती है, जिससे हम ऊब चुके है, नफ़रत का अनुभव करते हैं और 'कुछ' नहीं से शुरू होती यात्रा 'कुछ' की खोज में हमें ले जाती है

ISSN 2454-2695
Volume 01 Issue 08
September 2015

आगे | हम पलपल छोड़ते हुए कुछ न कुछ पकड़ लेते हैं | सबकुछ छोड़ने का दावा करने वाला इंसान चाहें किसी भी रूप में इस धरती पर विचरण कर रहा हो, क्या वो अपनी संवेदना, मन की भावनाएं, अपने विचार और अपनी इच्छाओं को छोड़ पाता है? अगर इंसान से कुछ भी छूटता नहीं है तो फिर सबकुछ छोड़ने की जद्दोजहद में क्यूं फँसने लगे हैं हम? संसार की रचना के अनुसार कोई भी इंसान दूसरे इंसान के साथ किसी भी कारणों से जुड़ा हुआ रहता है | आप उसे गुरु-शिष्य, परिवार के सदस्य, दोस्ती या किसी रिश्ते का नाम दें या नहीं भी देते हैं | इंसान इस धरती को छोड़कर कहीं भी नहीं जा सकता | अगर जाता है तो उनका शरीर जाता है, उनकी आत्मा अविनाशी है इसलिए वो किसी न किसी रूप में इस धरती पर विचरण करता है |

जब हम छूटने का अनुभव करते हैं तो हमें यह भी समझना चाहिए कि हम कहीं, किसी अलग रूप में किसी दूसरे के साथ जुड़ जाते हैं | हर कदम पर एक नई साँस, नई राह, नया साथ, नई दिशा और नया मुकाम होता है | हमें बस चलते रहना है एक इंसान के रूप में जो ईश्वर का अंश है | समय के साथ आते बदलाव में ज़िंदगी को ढालते हुए साक्षी भाव से जीना है | अपने व्यक्तित्व की आभा से बाहर रहकर खुद के व्यक्तित्व को देखना है, उनके बारे में सोचना है और उसे ईश्वर के दूत के रूप में ढालते हुए ज़िंदगी को आगे ले जानी है | ज़िंदगी के साथ समय चलता है और समय ही हमारे मुकाम को तय करता है, वोही हमें एक हाथ से दूसरे के हाथों में सौंपता है और हमें सिर्फ समय की कठपूतली बनकर उसका साथ निभाना है | छोड़ने की जिद्द से ज्यादा जो छूट रहा है, भूलकर जो जुड़ रहा है उसका स्वागत करना है, उसी में हमारी नियति और खुशी का स्वीकार करना है | जो कुछ हमसे छूट जाता है या हम छोड़कर कदम बढाते हैं, उसके बाद हर नया कदम हमें एक नए बंधन से जोड़ देता है |

* * *